www.thearyasamaj.org

RNI No. 26281/74 रजि. नं. पी.बी./जे.एल–011/2015-17

ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

साप्ताहिक
आर्य मर्यादा
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का प्रमुख साप्ताहिक पत्र

POSTAGE PRE-PAID MAIL BUSINESS CENTRE 24 MAR 2017 JALANDHAR CITY R.M.S.

मूल्य : 2 रु.
वर्षः 73 अंक : 52
सृष्टि संवत् 1960853117
26 मार्च, 2017
दयानन्दब्द 193
वार्षिक : 100 रू.
आजीवन : 1000 रू.
दूरभाष : 2292926, 5062726

जालन्धर

वर्ष–73, अंक : 52, 23-26 मार्च 2017 तदनुसार 13 चैत्र सम्वत् 2073 मूल्य 2 रु०, वार्षिक 100 रु० आजीवन 1000 रु०

आर्य समाज को नया रूप देने की आवश्यकता

ले०- श्री सुदर्शन शर्मा प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

आर्य समाज की नींव के रूप में जिन नैतिक मूल्यों ने आर्य समाज को सुदृढ़ता प्रदान की है, आर्य समाज के कार्यों को गति दी है, उनके तीन विभाग किए जा सकते हैं- सिद्धान्त, संगठन और प्रचार। आर्य समाज ने पिछले 142 वर्षों में जितनी प्रगति की है, देश की स्वतन्त्रता में अपना योगदान दिया है, समाज सुधार के कार्यों को नई दिशा दी है, उसका सबसे बड़ा कारण था अपने सिद्धान्तों पर पूरी शक्ति और लगन से चलने का प्रयत्न करना। दूसरा अपने सिद्धान्तों को क्रियान्वित करने के लिए एक संगठन का आधार रखना और तीसरा अपनी विचारधारा का प्रचार करना। परन्तु जब हम अपने पिछले इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं और आज की परिस्थितियों पर गम्भीरतापूर्वक चिन्तन करते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है कि अब हमें बहुत कुछ बदलने की आवश्यकता है। उस समय परिस्थितियां कुछ और थी आज कुछ और है। जब आर्य समाज की स्थापना हुई थी उस समय देश में वह जागृति नहीं थी जो आज हम देख रहे हैं। उस समय इस्लाम और ईसाइयत का बहुत अधिक प्रचार था और देश में कोई ऐसी संस्था नही थी जो देशवासियों को इस्लाम और ईसाइयत के पंजे में फंसने से रोक सकती। देश में अंग्रेजों का शासन था। इसलिए ईसाइयत का बोलबाला था। राजशक्ति की आड़ में ईसाइयत का प्रचार हो रहा था। उससे पहले कई वर्षों तक मुसलमानों का शासन रहा। उस समय इस्लाम का प्रचार होता रहा। कई मुस्लिम बादशाहों ने तलवार के जोर से अपने धर्म का प्रचार किया था। इसका परिणाम यह हुआ कि इस देश की जनता इतनी भयभीत हो गई थी कि कोई भी इस्लाम और ईसाईयत के विरूद्ध बोलने का तैयार नहीं था। इस्लाम के विरूद्ध सबसे बड़ा विद्रोह गुरू तेग बहादुर ने किया था और उसके बाद एक बालक वीर हकीकत राय ने किया था। उनको उसका जो परिणाम भुगतना पड़ा वह भी हमारे सामने है।

जिस समय युग प्रवर्तक महर्षि दयानन्द सरस्वती जी कार्यक्षेत्र में उतरे, उस समय हमारे देश की जनता इतनी दब चुकी थी कि कोई बोलने की हिम्मत नहीं करता था। पहली बार महर्षि दयानन्द ने विद्रोह की आवाज उठाई और उसने सारी हिन्दू जाति को हिलाकर रख दिया। उन्होंने अपने देशवासियों को याद दिलाया कि वे क्या थे और क्या बन गए? उन्होंने हमें केवल राजनैतिक स्वतन्त्रता का मार्ग ही नहीं दिखाया बल्कि धार्मिक और सामाजिक उत्थान के लिए भी तैयार किया। उस समय की जनता के लिए विशेष कर बुद्धिजीवियों के लिए यह एक नई स्थिति थी। उनमें आत्मविश्वास पैदा हो गया और वे एक बार फिर अपने पैरों पर खड़े होने के लिए तैयार हो गए। यही कारण था कि जब महर्षि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना की तो बहुत जल्दी ही सारे देश में इसका प्रचार हो गया। लोग आर्य समाज की तरफ आकर्षित होने लगे। आर्य समाज के कार्यों से समाज को एक नई दिशा मिली और उन कार्यों की चमक से सारा देश प्रकाशित होने लगा।

आज परिस्थितियां बदल गई हैं। आर्य समाज का नाम तो आज भी सारे देश में फैला हुआ है। शिक्षण संस्थाओं के रूप में डी.ए.वी. और आर्य शिक्षण संस्थाओं का जाल पूरे देश में फैला हुआ है परन्तु फिर भी जिस रूप में आर्य समाज का प्रचार होना चाहिए था वह नहीं हो पा रहा है। जिस अन्धविश्वास को मिटाने का बीड़ा आर्य समाज ने उठाया था, वही अन्धविश्वास और पाखण्ड समाज को अपने पंजों में जकड़ रहा है। निर्मल बाबा, साईं बाबा के नाम पर धर्म के ठेकेदार अपनी-अपनी दुकानें चला रहे हैं। महर्षि दयानन्द ने किसी भी मनुष्य की विचारधारा को जनता के सामने नहीं रखा, वह जानते थे कि मनुष्य अपने आप में चाहे कितना ही उच्चकोटि का क्यों न हो, उसमें कोई न कोई कमी तो रह ही जाती है। इसलिए उन्होंने कहा कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है। यह किसी मनुष्य के लिखे हुए नहीं हैं, ये सारी मानव जाति के लिए हैं। जब वेदों का प्रकाश हुआ था, उस समय संसार में मानव के सिवाय कोई जाति नहीं थी। इसलिए वेद का ज्ञान भी सम्पूर्ण मानव जाति के लिए दिया था।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

विक्रमी नवसम्वत- नव वर्ष के शुभ अवसर पर
हार्दिक बधाई

नववर्ष-नवसम्वतसर 2074 चैत्र सुदी प्रतिपदा दिनांक 28 मार्च 2017 से आरम्भ हो रहा है। सृष्टि सम्वत् 1960853118 के शुभ अवसर पर तथा विक्रमी सम्वत् 2074 के शुभारम्भ पर हम आर्य मर्यादा के सभी पाठकों, आर्य समाजों व आर्य शिक्षण संस्थाओं के अधिकारियों, कार्यकर्त्ताओं, प्रिंसीपलों, अध्यापकों, प्राध्यापकों तथा सभी आर्य बन्धुओं व आर्य बहनों को आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब की ओर से, आर्य विद्या परिषद पंजाब की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं भेंट करते हैं व हार्दिक बधाई देते हैं।

हार्दिक शुभ कामनाओं सहित

सुदर्शन कुमार शर्मा — प्रधान
प्रेम भारद्वाज — महामंत्री
सुधीर कुमार शर्मा — कोषाध्यक्ष
अशोक परूथी एडवोकेट — रजिस्ट्रार

समस्त अधिकारी व अन्तरंग सदस्य
आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन,
चौक किशनपुरा जालन्धर

www.thearyasamaj.org

यज्ञ से लाभ-सामवेद

-ले० शिव नारायण उपाध्याय-कोटा

सामवेद को सामान्यतया ईश्वरोपासना का वाहक बताया जाता है। यज्ञ भी ईश्वरोपासना का ही साधन माना जाता है इसलिए सामवेद में यज्ञ से होने वाले लाभों का विस्तृत वर्णन हुआ है।

इस लेख में हम सामवेद के मंत्रों के आधार पर यज्ञ से होने वाले लाभों का संक्षेप में वर्णन करना चाहते है।

त्वेषस्ते धूम ऋणवति दिवि सं छुक्र : आततः।

सूरो न हि द्युता त्वं कृपा पावक रोच से।।

साम. मंत्र संख्या 83

अर्थ-(पावक) शोधाग्ने। (ते, त्वेषः) तुझ प्रदीप्त हुए का (शुक्रः) धूम (दिवि, आततः सन्) आकाश में फैला हुआ (ऋण्वति) मेघ रूप में परिणत हो जाता है (हि) निश्चय (त्वम्) तू (सूये, न) सूर्य सा (कृपा, द्युता) समर्थ दीप्ति के साथ (रोचसे) प्रकाश करता है।

तात्पर्य यह है कि अग्नि में हव्य सामग्री के डालने से उसका शुद्ध धुंआ आकाश में जाकर मेघ बनता है और जल को शुद्ध कर शुद्ध जल वर्षा कर शुद्ध अन्नादि उत्पन्न कर हमें उपकृत करता है। इसी विषय को क्रम से आगे बढ़ाते हुए अगले मंत्र में कहा गया है-

त्वं हि क्षैतवद्यशोऽग्ने मित्रो न पत्यसे।

त्वं विचर्षणे श्रवो वसो पुष्टिं न पुष्यसि।।

साम. मंत्र सं. 84

अर्थ-(अग्ने) हे अग्ने ! (त्वम्) तू (क्षैतवत् यशः) पृथ्वी के हितकारी अणु युक्त जल का (पत्यसे) वर्षाने वाला है। (विचर्षणे वसो) दृष्टि के सहायकं ! आठ वसुओं में से एक। (त्वम्) तू (हि) ही (मित्रो न) मित्र के समान (श्रव) अन्न (कृषि) को (पुष्टिं, न) पुष्टि सी (पुष्यसि) बढ़ाता है। मंत्र में कहा गया है कि अग्नि ही पृथ्वी के हितकारी जल को बरसा कर मित्र के समान हमारी खेती को पुष्ट करता है।

अग्नि गमनशील है। उसे देवताओं का दूत भी कहा जाता है वह देवताओं के लिए किए गए हव्य को फैलाकर उन तक पहुंचाता है।

प्रातरग्निः पुरूप्रियो विशः स्तवेतातिथिः।

विश्वे यस्मिन्नमर्त्ये हव्यं मर्तास इन्धते।।

साम. मं. सं. 85

अर्थ (विश्वे, मर्त्तासः विशः) समस्त मरणधर्मी मनुष्य (यस्मिन् अमर्त्ये) जिस अमर अग्नि में (हव्यम् इन्धते) हवन करते हैं वा करें वह (पुरूप्रियः) बहुतों को प्यारा इष्ट साधक (अतिथि) सदा गमनशील (अग्निः) अग्नि (स्तवेत) वर्णित किया जावे।

इन दो मंत्रों में कहा गया है कि सभी मनुष्यों को प्रातः काल ही उठकर हवन तथा मंत्रों से अग्नि का वर्णन करना चाहिए।

अग्नि अमर देव है और मनुष्य उसकी अपेक्षा मरण धर्मा है।

अगले मंत्र में कहा गया है कि हम नित्य हवन करते रहें।

यद्वाहिष्ठं तदग्नये बृहदर्च विभावसो।

महीषीव त्वद्रयिस्त्वद्वाजा उदीरते।।

साम. मं.सं. 86

अर्थ-हे मनुष्य। तू (यत्, बृहत् वाहिष्ठम्) जो बड़ा, वाही से वाही द्रव्य है (तत्) उसे (विभावसो, अग्नये, अर्च) प्रकाश से बसे हुए, अग्नि में होम कर। (ऐसा करने से) (महिषीव, त्वत् रयिः) बहुत सा, तेरा धन और (त्वत् वाजाः उदीरते) तेरे अनाज उपजते हैं।

अगले मंत्र में यज्ञ कर्म ही प्रशंसा की गई है।

विशो विशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरूप्रियम्।

अग्नि वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः।।

साम. मं. सं. 87

अर्थ-(वाजयन्तः) हे अन्नाभिलाषी पुरूषो। (वः) तुम्हारे (विशोविशः) मनुष्य मात्र के (पुरोप्रियम्) अति हितकारी (अतिथिम्) निरन्तर गति वाले (शूषस्य, दुर्यम्) सुख के धाम (अग्निम्) अग्नि को (मन्मभिः) मन्त्रात्मक (वचः) वचनों से (वः) तुम्हारे लिए (स्तुषे) प्रशंसा करता हूँ। मंत्र में परमात्मा का उपदेश है कि हे मनुष्यों। यदि अन्न, धन, धान्यादि चाहते हो तो मनुष्य मात्र के लिए हितकर निरन्तर गतिशील, सुख के घर अग्नि अर्थात् आहवनीयादि भौतिक तथा मुझ परमात्मा के गुणों को जानो। मैं वेद मंत्रों द्वारा यह तुम्हें बताता हूँ।

जो यज्ञ सभी देवताओं के अनुकूल कहा गया है उसकी विधि बताते हैं-

इत एत उदारूहन् दिवः पृष्ठान्या रूहन्।

प्र भूर्जयो यथा पथो द्यामङ्गि रसो ययुः।।

साम. मं. सं. 92

अर्थ-(यथा) जिस प्रकार (भूः) पृथ्वी के (जयः) जीतने वाले (पथः) मार्गों को (उदारूहन्) उभर कर चलते हैं तद् वत् (एते) ये (अंगिरसः) अङ्गारे अथवा लपटें (इतः) इस पृथ्वी लोक से (दिवः) आकाश के (पृष्ठानि) पीठों को (आरूहन्) चढ़ते और (द्याम्) द्युलोक को (प्र ययुः) जाते हैं। अर्थात् जिस प्रकार भूमण्डल के विजेता लोग उन्नत होकर चलते हैं इसी प्रकार अग्नि में होम किए हुए उत्तम सुगन्ध मिष्ट पुष्ट रोग नाशक आदि द्रव्यों सहित अंगारे वा लपटें जब आकाश तल के ऊपर चढ़ते और द्युलोक में पहुंचते हैं तो सूर्यादि द्युलोकस्थ देवों की अनुकूलता कराते और उससे परमात्मा की आज्ञा का पालन होता है।

राये अग्ने महे त्वा दानाय समिधीमहि।

इडिष्वा हि महे वृषन् द्यावा पृथिवी।।

साम. मं. सं. 93

अर्थ-(अग्ने) हे अग्ने। (महे, राये) महाधन धान्यादि के लाभार्थ (त्वा) तुझको (दानाय) हव्य देने के लिए (समिधीमहि) हम प्रदीप्त करते हैं। (वृषन्) वृष्टि के हितकारी। (द्यावा) आकाश (हि) और (पृथिवी) भूमि पर (महे, होत्राय) भारी हवन के लिए (ईडिष्व) हम वर्णन करते हैं। अर्थात् धन्य धान्यादि महालाभों के लिए मनुष्य को हव्य होमना चाहिए और अग्नि को प्रदीप्त करते हुए उसका (अग्नि का) वर्णन करना चाहिये।

रोगों से बचने के लिए भी हवन करना चाहिए।

प्रत्यग्ने हरसा हरः श्रृणाहि विश्वतस्परि।

यातु धानस्य रक्षसो बलं न्युब्जवीर्यम्।।

साम. मं. सं. 95

अर्थ-(अग्ने) हे परमात्मन्। (यातुधानस्य) दुष्ट दस्यु अथवा रोगादि के (हरः) हरने वाले (बलम्) बल को (हरसा) अपने तेज से (विश्वतः) चारों ओर (परि) फैले हुए को (प्रति श्रृणाहि) नष्ट कर और (रक्षसः) दस्यु वा रोगादि के (वीर्यम्) पराक्रम को (न्युब्ज) निःशेष करके भग्न कर।

यज्ञ करते समय वेद मंत्रों का भी उच्चारण करना चाहिए क्योंकि उन मंत्रों में यज्ञ के लाभ बताये गए हैं।

प्र होत्र पूर्व्यं वचोऽग्नये भरता बृहत्।

विप्रां ज्योतींषि बिभ्रते न वेध से।। **साम. मं. सं. 98**

अर्थ-(वेधसे न) जगत् कर्ता के समान (विप्रां ज्योतींषि बिभ्रते) मेधावी लोगों में, ज्योतियों को धारण करते हुये (होत्रे) हवन कर्त्ता (अग्नये) अग्नि के लिए (पूर्व्यम्) सनातन (बृहत्) बड़ा (वचः) सूक्त (प्र भरत) उच्चारित करो।

सामवेद में ऐसे पचासों मंत्र हैं परन्तु हम एक मंत्र और देकर विषय को विराम देते हैं।

निरन्तर प्रतिदिन यज्ञ करने वाले का शत्रु भी कुछ बिगाड़ नहीं कर सकते।

न तस्य मायया च न रिपुरीशीत मर्त्यः।

यो अग्नये ददाश हव्य दातये।।

साम. मं सं. 104

अर्थ-(यः, मर्त्यः) जो मनुष्य (हव्य दातये) देवों के हव्य देने के लिए (अग्नये ददाश) अग्नि को देता है (तम्य, रिपुः) उसका शत्रु (मायया च न) छल बुद्धि से भी (न, ईशीत) नहीं कुछ कर सकता। इति शम्।

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय......

आर्य समाज स्थापना दिवस पर विचार करें

इस बार 28 मार्च को आर्य समाज स्थापना दिवस है। दूसरे शब्दों में कहें तो आर्य समाज की आयु अब 142 वर्ष की हो गई है। कहने की आवश्यकता नहीं कि आर्य समाज के इस जीवन काल में देश-विदेश में आर्य समाज का जितना प्रचार हुआ है उतना किसी धार्मिक संस्था का नहीं हुआ है। देश के प्रत्येक प्रान्त में छोटे-बड़े सभी नगरों में आर्य समाज की स्थापना हो चुकी है। आर्य समाज एवं डी.ए.वी. शिक्षण संस्थाओं का फैलाव भी सम्पूर्ण भारतवर्ष में है। इस विशाल संगठन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए आज हमें इसके स्थापना दिवस के अवसर पर कुछ विचार करना है और उसके अनुसार कार्य करने का संकल्प लेना है।

आर्य समाज वेदों का प्रचार-प्रसार करने की प्रमुख संस्था है। इसका मुख्य उद्देश्य वेद और सत्य सिद्धान्तों का प्रचार करना है। आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य का जीवन आर्य समाज की विचारधारा के अनुकूल होना चाहिए और इसके लिए उसे स्वाध्यायशील होना जरूरी है। आर्य समाज के आरम्भिक काल में आर्य समाज के सदस्य स्वाध्यायशील, विचारशील व वैदिक सिद्धान्तों पर चलने वाले हुआ करते थे। दुर्भाग्य से आज यह प्रचार भावना आर्य समाज के सदस्यों में कम हो रही है। हमारे साप्ताहिक सत्संग अपने तक ही सीमित हो गए हैं। दूसरे लोग तो क्या आर्य समाज के सदस्यों के बच्चे भी सत्संग में नहीं जाते । स्वाध्याय हमारे जीवन का अंग नहीं रहा। वेद हमारे घरों में नहीं हैं। जब हम वेदों को, महर्षि दयानन्द के ग्रन्थों को और अन्य साहित्य को स्वयं नहीं पढ़ेंगे तो दूसरों को पढ़ने-पढ़ाने की क्या प्रेरणा करेंगे। इसलिए आज हमें आर्य समाज के सिद्धान्तों को अपनाने पर बल देना चाहिए, वेदों का स्वाध्याय करना चाहिए। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म बताया है। आज हमें विचार करने की आवश्यकता है कि क्या हम उस परम धर्म का पालन कर रहे हैं या नहीं।

आर्य समाज के सभी सिद्धान्त और नियम बुद्धिसंगत हैं अर्थात् तर्क तथा युक्ति के अनुकूल है किन्तु हमने उन्हें अपने जीवनों में नहीं डाला। परिणामस्वरूप न हमारे सामाजिक जीवन में शक्ति है और न व्यक्तिगत जीवन में। आज का अशान्त मानव ऐसी धर्म, सभा या संगठन की शरण में जाना चाहता है जो उसे आत्मिक शान्ति और मानसिक सुख दे सके। इसके लिए आर्य समाज के लोगों को अपने जीवन को आदर्श के रूप में प्रस्तुत करना होगा। अपने जीवन में महर्षि दयानन्द के आदर्शों और सिद्धान्तों को पूर्ण रूप से अपनाना होगा। किसी भी संस्था का उन्नति करना इस बात पर निर्भर करता है कि उस संस्था के कार्यकर्ता संस्था के सिद्धान्तों का पालन करने वाले हैं या नहीं। आर्य समाज के सिद्धान्त बुद्धि सम्मत और तर्क की कसौटी पर खरे उतरने वाले हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के नियमों के रूप में हमें ऐसे सिद्धान्त दिए हैं जिनका पालन करने से सम्पूर्ण विश्व मानवता की ओर अग्रसर हो सकता है। ये नियम किसी व्यक्ति विशेष या सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं अपितु सम्पूर्ण संसार के लिए है। इसलिए आर्य समाज का लक्ष्य निर्धारित करते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने आर्य समाज के छठे नियम में उसकी रूप रेखा प्रस्तुत की है कि संसार का उपकार करना आर्य समाज का मुख्य उद्देश्य है। इस महान् उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हमें अपने जीवन को शुद्ध बनाना होगा। हमारा प्रत्येक कार्य, व्यवहार आर्यत्व के अनुकूल होना चाहिए। हमारे उच्च व्यवहार, शुद्ध जीवन, आचार- विचार की पवित्रता के कारण ही दूसरे लोग हमारी ओर आकर्षित होंगे।

जिन महापुरूषों ने आर्य समाज के लिए तप और त्याग किया है उन महापुरूषों को हमें कभी नहीं भूलना चाहिए अपितु उनके जीवन एवं कार्यों से प्रेरणा लेकर आर्य समाज के कार्य को आगे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए। स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हंसराज, गुरूदत्त विद्यार्थी, पं. लेखराम आदि आर्य समाज की विभूतियों पर हमें गौरव होना चाहिए। नीतिकार ने कहा है कि महाजनो येन गता: स: पन्था: अर्थात् महापुरूष जिस मार्ग पर चलते हैं उसी का अनुसरण हमें करना चाहिए। इन लोगों ने आर्य समाज के कार्यों के लिए अपना-अपना बलिदान दिया है और आर्य समाज को सींचने का कार्य किया है। इन महापुरूषों को तथा इनके कार्यों को हमें हमेशा याद रखना चाहिए।

आर्य समाज की उन्नति के लिए आज हमें जातिवाद और बिरादरीवाद से ऊपर उठकर कार्य करना होगा। आर्य समाज की स्थापना को हुए इतने वर्ष बीत जाने पर भी आज हम जातिवाद और बिरादरीवाद से ऊपर नहीं उठ पाए हैं। इसी कारण आर्य समाज के प्रचार और प्रसार का क्षेत्र सीमित हो गया है। पहले लोग अपनी जात बिरादरी को छोड़ कर आर्य समाज में आते थे तो यही उनकी जात और बिरादरी बन जाती थी परन्तु आज लोगों में वह भावना नहीं है। इस भावना के न होने के कारण आज भी समाज में जाति प्रथा के आधार पर आरक्षण की बात होती है और आरक्षण प्राप्त करने के लिए दंगे भड़काए जाते हैं। आर्य समाज सदैव जातिवाद से ऊपर उठकर **संगच्छध्वं, सवदध्वं** की भावना से कार्य करने का सन्देश देता है। इसलिए आज हमें इन बातों से ऊपर उठकर समाज की उन्नति के लिए कार्य करना है जहां पर जाति के आधार पर किसी से भेदभाव न हो। सभी मनुष्य समाज के अंग हैं उनमें जन्म के आधार पर कोई भी छोटा बड़ा नहीं है। इसलिए महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने वर्णव्यवस्था पर बल दिया।

आर्य समाज ने अपनी संस्थाएं प्रचार के साधन के रूप में चलाई थी। आज संस्थाएं साधन न बनकर साध्य बन गई हैं। इसलिए आज आर्य समाज की संस्थाओं को अधिक से अधिक उपयोगी बनाने का प्रयास करना चाहिए। वेद प्रचार के कार्यों को आगे बढ़ाने के लिए इन संस्थाओं का सदुपयोग होना चाहिए। आर्य समाज के कार्य को आगे बढ़ाने के लिए मिशनरी प्रचारकों को तैयार करना चाहिए। आर्य समाज में कार्यक्रमों की एक नई रूपरेखा तैयार करनी चाहिए और उस योजना के आधार पर कार्य करना चाहिए।

आर्य समाज स्थापना दिवस के अवसर पर हम सभी विचार करें और सोचें कि हम आर्य समाज के कार्यों को किस प्रकार आगे बढ़ा सकते हैं। हमें स्वाध्याय पर बल देना चाहिए, नए लोगों को जोड़ने का प्रयास करना चाहिए, आर्य समाज के साप्ताहिक सत्संग में अपने बच्चों को लेकर जाना चाहिए, आर्य समाज के सिद्धान्तों को अपनाने पर बल देना चाहिए, अपने आचरण खान-पान, व्यवहार को शुद्ध और पवित्र करना चाहिए। मेरी सम्मति में यदि हम इन बातों की ओर ध्यान दें और उन्हें क्रियान्वित करने का संकल्प लें तो आर्य समाज अपने कार्यक्षेत्र में और अधिक उन्नति कर सकता है।

-प्रेम भारद्वाज संपादक एवं सभा महामन्त्री

www.thearyasamaj.org

आत्मा की उन्नति ही सच्ची जीवनोन्नति

-ले० मनमोहन कुमार आर्य, पताः 196 चुक्खूवाला-2 देहरादून-248001

समस्त दृश्यमान जगत् वा संसार ईश्वर ने जीवात्मा की उन्नति अर्थात् अभ्युदय एवं अपवर्ग के लिए ही बनाया है। जीवात्मा क्या है और इसकी उन्नति का तात्पर्य क्या है, इस पर वैदिक ज्ञान को सम्मुख रख कर विचार करने से सभी प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं। वैदिक मान्यताओं के अनुसार जीवात्मा एक सूक्ष्म, अनादि, नित्य, अनुत्पन्न, अणुमात्र, अदृश्य, अविनाशी, अजर, अमर, ज्ञानार्जन व कर्म जिसका स्वाभाव व प्रवृत्ति है, जो स्वतंत्रतापूर्वक कर्मों को करता है व उसके अनुरुप ईश्वरीय व्यवस्था से फल को प्राप्त करता है। ऐसी एक शाश्वत सत्ता है जिसे जीवात्मा कहते हैं। हम मनुष्य जीवन में इस शरीर रूपी घर के निवासी हैं। हम ऐसे निवासी हैं जो जन्म से कुछ समय पूर्व ईश्वरीय व्यवस्था से माता के उदर स्थित गर्भ में आते हैं, कुछ समय बाद हमारा बाहर की दुनियां में आने पर जन्म हुआ कहा जाता है और आयु का भोग कर कालान्तर में हम शरीर से निकल जाते हैं जिसे हमारी मृत्यु कहा जाता है। जीवात्मा का शरीर से गहरा सम्बन्ध है। शरीर है तो जीवात्मा उसके द्वारा स्वयं के अस्तित्व की अनुभूति करने सहित अन्यों पर भी अपने शरीर व इसके द्वारा किये जाने जाने वाले कार्यों के द्वारा प्रकट होता है।

ईश्वर ने यह जगत वा ब्रह्माण्ड बनाया है। इस जगत का उपादान कारण यद्यपि सूक्ष्म जड़ प्रकृति है तथा ईश्वर इसका निमित कारण है। संसार रचना में ईश्वर का उद्देश्य शाश्वत् जीवों को उनके पूर्व कल्प वा सृष्टि तक के अवशिष्ट कर्मों का यथायोग्य भोग अर्थात् सुख व दुःख रूपी फल प्रदान करता है। मनुष्य एवं अन्य योनियों में नाना प्रकार के जो शरीर दिखाई देते हैं। उन में जीवात्मा अपने-अपने पूर्व कर्मानुसार फल भोग के लिए ईश्वर द्वारा भेजे गये हैं। मनष्येतर सभी योनियां भोग योनियां हैं जबकि मनुष्य योनि कर्म व भोग अर्थात् उभय योनि है। मनुष्य योनि में मनुष्य पूर्व कर्मों का भोग भी करता है और इसके साथ स्वतन्त्रतापूर्वक कर्मों को भी करता है। मनुष्यों को क्या कर्म करने हैं इसके लिए ईश्वर ने सृष्टि के आदि में वेदों का ज्ञान दिया था। कालान्तर में जब मनुष्यों को वेदों को समझने में कठिनाई हुई तो हमारे ऋषियों ने वेदों पर व्याख्यान के रुपं में अनेक ग्रन्थों, दर्शन व उपनिषद आदि, का प्रणयन किया जो विगत सहस्रों वर्ष व इससे भी अधिक पुराने हैं। यद्यपि हमारा बहुत सा साहित्य विधर्मियों ने नष्ट कर दिया तथापि आज भी अनेक ग्रन्थ हमें प्राप्त हैं जिनसे हम मार्गदर्शन प्राप्त कर सकते हैं। वेदानुकूल किये जाने वाले कर्म व कर्तव्य पुण्य कर्म होते हैं और वेद विरुद्ध कर्म पाप कर्म होते हैं जिनका परिणाम दुःख के रूप में हमारे सामने आता है।

हमें यह भी ज्ञान होना चाहिये कि सभी योनियों वा शरीरों में मनुष्य का शरीर वा योनि उत्तम है। मनुष्य योनि एक प्रकार से दुःखों से मुक्ति का द्वार है। दुःखों से मुक्ति ज्ञान प्राप्ति व सद्कर्मों को करने से सम्भव है। इसका कारण है कि सद्कर्मों का फल सुख होता है। असद्कर्मों का फल दुःख होता है। अतः असदकर्म त्याज्य व निषिद्ध हैं। असद्कर्म व सद्कर्मों का ज्ञान वेद ज्ञान से होता है, अतः मनुष्य योनि में रहकर वेदाध्ययन करना परमावश्यक है और यह मनुष्य का मुख्य कर्तव्य व परमधर्म है। वेदाध्ययन से सद-असद कर्मों सहित दुःखों से छूटने व मोक्ष प्राप्ति के साधनों का ज्ञान होता है। हमारे प्राचीन ऋषि मुनि व योगी वेदाध्ययन व उसका आचरण ही किया करते थे और मोक्ष व आत्मोन्नति को प्राप्त करते थे। आज का युग पूर्व समय से कहीं अधिक सुविधाजनक है। आज हमारे पास करणीय कर्मों यथा सन्ध्योपासना, देव यज्ञ अग्निहोत्र, पितृ यज्ञ, अतिथि यज्ञ एवं बलिवैश्वदेव यज्ञ सहित अनेकानेक अनुष्ठानों का संस्कृतेतर हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में ज्ञान व विधि दोनों उपलब्ध हैं जिसे पुस्तकों के माध्यम से घर में रहते हुए पढ़कर व दूरभाष आदि से विद्वानों से शंकाओं का समाधान कर सकते हैं और अपनी आत्मोन्नति सुनिश्चित कर सकते हैं। आत्मोन्नति का प्रमुख साधन योगाभ्यास व योग-ध्यान साधना सहित अग्निहोत्र यज्ञ व समग्र रूप में वेदाचरण ही है। हमें लगता है कि महर्षि दयानन्द ने साधना का जो सरल रूप सत्यार्थप्रकाश सहित अपने अनेकानेक ग्रन्थों में लिखकर प्रस्तुत किया है वह सरल व सुबोध ज्ञान व साधन इससे पूर्व के मनुष्यों को प्राप्त नहीं थे। इसके लिए हम स्वयं का ही उदाहरण ले सकते हैं। हम न किसी गुरुकुल में जाकर पढ़े हैं और न किसी विद्वान संन्यासी व धर्मोपदेशक आचार्य की शरण में रहे हैं। हमने आर्यसमाज में अनेकानेक विद्वानों के उपदेशों को श्रवण करने, उनकी संगति करने के साथ ऋषि दयानन्द, आर्य विद्वानों व वेदादि साहित्य पर आर्य विद्वानों के हिन्दी भाष्यों व टीकाओं का अध्ययन किया जिससे हमें लगता है कि हम शास्त्र की सामान्य व किंचित गूढ़ बातों को समझ पाते हैं।

आर्य समाज में हमारे जैसे सहस्रों विद्वान व ऋषि भक्त अनुयायी हैं जो स्वाध्याय द्वारा आवश्यकता के अनुरूप ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। इसका श्रेय यदि एक व्यक्ति को दिया जाये तो वह महर्षि दयानन्द जी महाराज व उनका साहित्य ही है। अतः महर्षि दयानन्द जी ने सभी मनुष्यों का आत्मोन्नति का कार्य सरल बना दिया है। यह आश्चर्य की बात है कि आज का मनुष्य अविद्या व अज्ञान में फंसा हुआ है। आध्यात्मिक ज्ञान की वह अपेक्षा ही नहीं करता जबकि यह सरलता से सुलभ है। यह स्थिति पहले कभी नहीं थी। अन्य जो मत-मतान्तर हैं वहां परा विद्या अर्थात् आध्यात्मिक ज्ञान शुद्ध रूप में उपलब्ध नहीं होता।

अतः जीवनोन्नति व आत्मोन्नति के अभिलाषी मनुष्यों को आर्य समाज की शरण में आकर विद्वानों के उपदेश श्रवण सहित वेदानुकूल सत्यार्थप्रकाश एवं अन्य ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिये और साथ-साथ वृहद यज्ञों एवं ध्यान व स्वाध्याय शिविरों आदि में भी भाग लेते रहना चाहिये। ऐसा करने से उनके आत्मज्ञान व ईश्वर विषयक ज्ञान में वृद्धि होगी और साथ ही साधना से आत्मा व मन उन्नति को प्राप्त होगा। असद् कर्मों के प्रति उपेक्षा भाव उत्पन्न होगा और सद् कर्मों में प्रीति उत्पन्न होगी। इसी को आत्मोन्नति कह सकते हैं।

जिस मनुष्य की आत्मोन्नति हो जाती है उसका जीवन स्वामी दयानन्द जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं. लेखराम, पं. गुरुदत्त विद्यार्थी, स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती, पं. गणपति शर्मा, स्वामी विद्यानन्द सरस्वती, आचार्य डा. रामनाथ वेदालंकार, स्वामी सत्यपति जी, स्वामी चित्तेश्वरानन्द सरस्वती जी जैसा बन जाता है। वैदिक जीवन पद्धति पर चलने वाला मनुष्य स्वयं में सन्तुष्ट होने के साथ उसे अपने भविष्य व मृत्युपरान्त जीवन के प्रति भी पूर्ण सन्तुष्टि का भाव होता है। हमने देखा कि ऋषि दयानन्द जी ने जब अपने प्राणों का उत्सर्जन किया तो उन्होंने ईश्वरोपासना कर भाषा में ईश्वर की स्तुति की थी और स्वयं को ईश्वर इच्छा में समर्पित कर दिया था। उनके व्यवहार में मृत्यु के दुःख का कहीं किसी प्रकार का कोई भाव नहीं था। ऐसा ही हम पं. लेखराम जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी और पं. गुरुदत्त विद्यार्थी आदि विद्वानों के अन्तिम समय में भी देखते हैं। दूसरी तरह आज कल के अविद्याग्रस्त लोग जब मृत्यु के निकट होते हैं तो वह प्रायः दुःखी व सन्तप्त देखे जाते हैं। उन्होंने जो धन कमाया होता है वह उनके काम नहीं आता, जीवन में परोपकार व पात्र व्यक्तियों को दान आदि भी किया नहीं होता, धनोपार्जन में अनेक प्रकार से असत्य व छल-कपट का सहारा लिया होता है, अतः ऐसे मनुष्यों की आत्मा इस जीवन में भी उन्नत नहीं होती अतः ऐसे ही निम्न व सामान्य स्थिति वाली आत्मा की परजन्म में उन्नति होने की संभावना नहीं होती। आत्मोन्नति हेतु आत्मा व ईश्वर सहित संसार से संबंधित वैदिक ज्ञान परम आवश्यक है जिसका सरलतम साधन सत्यार्थ-प्रकाश व ऋग्वेदादि-भाष्य-भूमिका आदि ग्रन्थों सहित वेद, दर्शन, उपनिषदों आदि का अध्ययन है।

(शेष पृष्ठ 7 पर)

www.thearyasamaj.org

यज्ञों से मैं लोकहित के मार्ग पर चलूं

-ले० डॉ. अशोक आर्य १०४ शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी २०१०१० गाजियाबाद उ. प्र. भारत चलभाष ०९३५४७४५४२६

यजुर्वेद के प्रथम अध्याय के दूसरे मंत्र में यज्ञ की पवित्रता पर बल देते हुए कहा है कि इससे पवित्रता आती है, ज्योतिर्मय अर्थात् सब ओर प्रकाश फैलाने वाले, अनेक प्रकार की शक्तियों से संपन्न, प्राणशक्ति से भरपूर हो लोकहित करने वाले बनते हैं। इस प्रकार अपने को शक्ति से दृढ़ बना कर कभी भी कुटिलता को अपना कर अपने लिए दंड का कारण नहीं बनते। मंत्र इस प्रकार है :

वसोः पवित्रम्सि द्यौरसि पृथिव्यसी मातरिश्वनो घर्मोऽसि विश्वधाऽसि।

परमेण धाम्ना द्यंहस्व मा ह्वार्मा ते यज्यपतिर्ह्वार्षित।। यजुर्वेद 1.2।।

इस मंत्र में परम पिता परमात्मा ने जीव का ध्यान आठ बातों की ओर दिलाया है, जो इस प्रकार है-

1. यज्ञ से हम पवित्र बनते हैं: इस मंत्र को आरंभ करते हुए परम पिता ने जो शब्द दिए हैं, वह हैं वसोः पवित्रमसि अर्थात् है जीव ! तू प्रतिदिन यज्ञ करने वाला होने के कारण पवित्र बन गया है क्योंकि यज्ञ ही पवित्रता का सर्वोत्तम साधन है। प्रभु कहते हैं कि यज्ञ के जितने गुण जीवन में आते हैं, उतने अंश तक ही हमारा जीवन उत्तम बनता जाता है, पवित्र बनता जाता है। यज्ञ का भाव प्रार्थना से होता है, परोपकार से होता है। यज्ञ पुण्य का प्रमुख साधन है। यह एक ऐसा दान है जिस के संबंध में हम जानते ही नहीं कि हमारे इस दान का उपभोग, इस दान का लाभ किस-किस ने लिया है।

इस के उलट यदि हम कुछ करते हैं यथा अयज्ञ के कार्य करते हैं तो इस में हमारा स्वार्थ स्पष्ट दिखाई देता है। इस में परोपकार न हो कर पराकार निहित होता है, इस में दूसरे को पीड़ा देने की भावना रहती है तथा यह सब पाप का कारण बनता है।

2. यज्ञ से ही जीवन प्रकाशमय बनता है : प्रभु कहते हैं द्यौ : असि अर्थात् यज्ञ से मानव का जीवन प्रकाशमय बन जाता है। यज्ञ की अग्नि से सब ओर प्रकाश फैलता है। इस के करने से गुप्त रूप से दूसरों की सहायता करने की भावना बलवती होती है। जिस प्रकार इससे न जाने कितने लोगों का उपकार होता है, उस प्रकार ही हम भी चाहते हैं कि हम भी ऐसा परोपकार करने, ऐसे धन से दूसरों की सहायता करें कि हमें पता ही न चले कि हमने किस-किस की सहायता की है। किसी पर कभी एहसान जता ही न सकें, दिखा ही न सकें। इस प्रकार के कार्यों के कारण हमारा मस्तिष्क रूपी सूर्य द्युलोक में ज्ञान के सूर्य के समान सब ओर प्रकाश फ़ैलता है, सब को ज्ञान के प्रकाश से प्रकाशित करता है। इस में प्रथम स्थान पर देवपूजा को दिया गया है। जब हम देवपूजा अर्थात् हवन करते हैं तो यह देवपूजा हमारे मस्तिष्क को अधिक ही नहीं और भी अधिक प्रकाशित करती चली जाती है।

3. यज्ञ हमारी शक्तियों को बढ़ाता है: यज्ञ से मानवीय शक्तियाँ बढ़ती हैं। इसलिए इस मंत्र के शब्द पृथ्वी असि के माध्यम से बताया है कि हे मानव ! यज्ञ से तेरी शक्तियां बढ़ती हैं। इसलिए तू ऐसा उपाय कर कि जिन के कारण तेरी शक्तियां बढ़ें। इसके उल्ट कार्य करने से फल भी उल्ट ही होता है। मानव जीवन में कभी ऐसे कार्य न किए जावें कि जिनके कारण से शक्तियों का ह्रास हो, सदा ऐसे ही काम करें, ऐसे ही उपाय करें कि जिन से हमारी शक्तियों की वृद्धि हो सके। स्पष्ट है कि यह यज्ञ हमारी शक्तियों को बढ़ाने वाला है।

4. प्राणशक्ति बढ़ती है: यज्ञ से मानव की प्राणशक्ति बढ़ती है तथा यह प्राण शक्ति ही है, जिससे मानव का जीवन संभव होता है। यदि शरीर से प्राण शक्ति एक क्षण के लिए भी चली जाती है तो यह शरीर बेकार हो जाता है, लोग कहते हैं कि इस की मृत्यु हो गयी है। इसलिए हम अपनी प्राण शक्ति को बढ़ाने के लिए यह उपाय, यह क्रिया अवश्य करें तथा अपनी जीवणीय शक्ति को बढ़ावें।

5. शक्ति से सबको धारण करने वाला बन : हे मानव ! जो तेरी प्राण शक्ति बढ़ी है, उसका उपयोग तू दूसरों को धारण करने में लगा। इसके लिए मंत्र में कहा है कि विश्वधाः असी अर्थात् तू सब को धारण करने वाला बन। यह जो शक्ति तुझे मिली है यह किसी प्रकार के स्वार्थ में न लगे, अपने ही हित को बढ़ाने के लिए इस का प्रयोग न कर बल्कि तू इस शक्ति का उपयोग दूसरों की सहायता में, दूसरों के सहयोग में, दूसरों के हित साधन में लगा, दूसरों को उठाने में लगा। इस प्रकार दूसरों की रक्षा का कारण बन।

6. उत्कृष्ट तेज पा कर तू अपने को दृढ़ बना-हे मानव ! हे जीव ! तू इस बात को जान कि शक्तियाँ तीन प्रकार की होती हैं:

(क) उत्कृष्ट शक्ति : तेरी वह शक्ति, जो दूसरों के हित के लिए प्रयोग की जावे, उसे उत्कृष्ट शक्ति के रूप में जाना जाता है।

(ख) निकृष्ट शक्ति : जब तू औरों की हानि करता है तथा उनके नाश की कामना करता है तो तेरी यह शक्ति निकृष्ट शक्ति बन जाती है।

(ग) मध्यम शक्ति : जब तू स्वावलंबी हो जाता है, स्वार्थी हो जाता है तथा अपनी वृद्धि में, अपनी उन्नति में ही सीमित हो जाता है तो इस प्रकार की शक्तियों को मध्यम शक्ति कहते हैं।

इन शक्तियों में उत्कृष्ट तेज अथवा उत्कृष्ट शक्ति ही सर्वोत्तम मानी गई है। मंत्र में भी कहा है कि परमेण धामना अर्थात् उत्कृष्ट तेज से तू द्यंहस्व अर्थात् अपने को दृढ़ बना और अपने को दृढ़ बना कर सबको धारण करते हुए तू विश्वधा बन। इस प्रकार प्रभु का आदेश है कि हे मानव ! तू सब शक्तियों को प्राप्त करके सब को धारण करने वाला बन अर्थात् परोपकार की भावना में रम जा, इसे हाथ में मत जाने दे तथा सदा सब का सहयोगी बन, मार्ग दर्शक बन। यही यश का मार्ग है, यही कीर्ति का मार्ग है।

7. सदा सरल मार्ग पर चल : प्रभु आगे उपदेश देते हैं कि हे जीवन ! तू कभी भी कुटिलता से भरे मार्ग पर न चल। कुटिल मार्ग पर चलने वाले का सदा अपयश ही होता है। यश पाने के लिए यह मार्ग श्रेय नहीं है। दूसरों की सहायता करना ही श्रेय मार्ग है। इसलिए तू सदा सरल व सुपथ पर ही चल। यज्ञ भी तो यह ही उपदेश देता है। अतः यज्ञीयता व कुटिलता कभी एक साथ नहीं चल सकते। इसलिए तू कुटिलता, धोखा, विश्वासघात से सदा दूर रह।

8. तेरे लिए पिता कभी कठोर न हो : अंत में मन्त्र कहता है कि हे जीव ! जहाँ तक तेरा संबंध है, तेरे लिए वह प्रभु कभी कठोर न हो। जो आदेश उस पिता ने तुझे कहा है, आदेश दिया है, उसे तूंने यथावत् स्वीकार कर लिया, यथावत् उस पर आचरण किया तो प्रभु तेरे लिए कठोर कैसे बन सकता है ? प्रभु के इस शांत उपदेश को तू सदा सुनता रह तथा उसके अनुसार कर्म कर। यदि तू ऐसा करेगा तो प्रभु को तेरे लिए दाम, भेद और दण्ड के प्रयोग की आवश्यकता ही न पड़ेगी। प्रभु सरलता को पसंद करता है। यह ही उस पिता को पाने का उत्तम साधन है। इस सरल मार्ग पर चलने से ही हे जीव ! तू परमेष्ठी अर्थात् परम स्थान को पा सकेगा। इस प्रकार यज्ञ की भावना को अपनाने के कारण प्रजापति बन जावेगा।

www.thearyasamaj.org

सशक्त युवा

-ले० आचार्य योगेन्द्र याज्ञिक आर्ष गुरुकुल महाविद्यालय नर्मदापुरम्, होशंगाबाद

युवा शब्द ''यु मिश्रणे अमिश्रणे च'' धातु से सिद्ध होता है। युवा शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए युवा सम्राट स्वामी दयानन्द कहते हैं-''यौति मिश्रयति अमिश्रयति वा सः युवा'' अर्थात् जो कठिन कार्य को भी अतिनिपुणता व सरलता से सिद्ध कर देवे और विपदाओं को नष्ट कर शीघ्र समस्त समस्याओं का निदान कर दे ; वह युवा कहलाता है।

युवा असीम शक्ति का अजस्र प्रवाह है। ऊर्जा से पूरित एक ऊर्जस्वल शक्ति का स्रोत है, शक्ति परमबल की अक्षय निधि है, समाज का मेरु दण्ड है। बाल व वृद्धों के बीच का सेतु है, इसके जागृत होने से राष्ट्र जागृत होता है इसके सुप्त होने से राष्ट्र भी सोता है। नवयुवकों व अणु शक्ति की प्रकृति समान होती है इसका उचित और सुरक्षित उपभोग ही राष्ट्र व समाज को प्रगति व समृद्धि प्रदान करता है। जैसे सब ऋतुओं में बसंत का महत्त्व है वैसे ही मनुष्यों में युवाओं का महत्त्व है। युवा हमारे भावी कर्णधार हैं। आज के युवक कल के वयस्क व मार्गदर्शक बनेंगे, इसलिए समाज और भविष्य के निर्माण में युवाओं की प्रमुख भूमिका है।

आचार्य यास्क निरुक्त ४-३-३८ में कहते हैं ''युवा प्रयैति कर्मणि'' अर्थात् एक के बाद दूसरे कर्म को करने वाला युवा होता है। 'युवा' शब्द लोक तथा वेद में एवं व्यवहारिक जगत में भी शक्ति के रूप में जाना जाता है। चारों वेदों में ४५ बार 'युवा' शब्द का पाठ आया है। यह शब्द सभी स्थानों पर किसी न किसी के विशेषण के रूप में आया है। इससे लगता है 'युवा' शब्द केवल अवस्थाविशेष का वाचक न होकर अपितु ऊर्जाविशेष का वाचक है। जब यह युवा द्वितीय अवस्था में ऊर्जा का संचय करता है तो वह नवीन सृजन करता है। वह दुष्टों के हृदयों में भूचाल उत्पन्न कर देता है। वह जब हुँकार उठाता है तो पर्वत भी मार्ग दे देते हैं। गर्जना करे तो समुद्र को भी राह देनी पड़ती है।

''द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्मसि'' के उद्घोष को युवा शक्ति ही सार्थक कर सकती है। जिनमें वाक्शक्ति, प्राणशक्ति, दर्शनशक्ति, बल, सहनशक्ति हो और जो स्वस्थ, सबल व संयमी हो वही युवा है।

युवा के संदर्भ में निदकर ने कहा था-

पत्थर सी हो मांस पेशियां,
लोह से भुज दण्ड अभय।
नस-2 में लहर आग की,
तभी जवानी पाती जय।।

युवा जब चरित्रवान, परिश्रमी, ईमानदार, राष्ट्रप्रेमी, कर्तव्यनिष्ठ होता है तो ऐसे युवा को देखकर ही किसी ने कहा है-'इतिहास उधर चलता है जिस ओर जवानी चलती है।'

सृष्टि के प्रारम्भ में भी परमेश्वर ने युवाओं पर विश्वास करके सृष्टि के प्रवाह को गति प्रदान करने हेतु युवाओं को जिम्मेदारी सौंपी थी। इस संदर्भ में सत्यार्थ प्रकाश के आठवें सम्मुलास में महर्षि दयानन्द स्पष्ट करते हैं-''क्योंकि जो बालक उत्पन्न करता तो उनके पालन के लिए दूसरे मनुष्य आवश्यक होते और जो वृद्धावस्था में बनाता तो मैथुनी सृष्टि न होती, इसलिए युवावस्था में सृष्टि की है। वेद भी कहता है-'सभेयो युवास्य यजमानस्य' सभ्य वीर युवा इस यजमान के घर में उत्पन्न होवें।''

परन्तु महाकवि बाणभट्ट कादम्बरी के शुकनासोपदेश में कहते हैं-''यौवनारम्भे च प्रायः शास्त्रजलप्रक्षालन निर्मलाऽपि बुद्धिः कालुष्यमुपयाति'' अर्थात् शास्त्र रूपी जल से प्रक्षालित निर्मल बुद्धि भी यौवन के प्रारम्भिक अवसर पर कलुषित हो जाती है। क्योंकि इस अवस्था में व्यक्ति अपने आप को बुद्धिमान समझता है। कोई उसे ज्ञान दे तो वह उसे कर्ण शूल की भांति प्रतीत होता है। परिणाम स्वरूप वह पथभ्रष्ट हो जाता है और ऐसा बुद्धिमान हो जाता है कि अपने पूर्वजों को मूर्ख समझने लगता है। परन्तु यह भूल जाता है कि हमारी संतान भी हमें ऐसा ही समझने वाली है।

शुद्धोपदेश श्रवण के न सुनने के कारण यह युवा Eat Drink And Be merry 'खाओ, पियो, मौज करो' के सिद्धान्त पर चलता हुआ जीवन के उद्देश्यों से भटक जाता है। उसकी जवानी बाइपास से निकल जाती है। शरीर, आत्मा, मन व बुद्धि का तेज समाप्त हो जाता है। जोश में होश खोने वाला युवा कर्त्तव्य के प्रति उदासीन, निजीवन के भाव से पूरित, पलायन्तवादी सोच, अपसंस्कृति से युक्त जीवन और अकेलेपन से संयुक्त हो जाता है। इसलिए प्रत्येक युवा के जीवन में संस्कारों की नितान्त आवश्यकता है। और वेद का यह संदेश ''इदं में ब्रह्म क्षत्रं च श्रियम् अश्नुताम्'' अर्थात् शक्ति के साथ-साथ ज्ञान से भी पूरित होना नितान्त आवश्यक है।

युवा यथार्थवादी सोच में जीने वाले बनें। युवा अवसरोचित साहस, श्रेष्ठ ज्ञान, उदारचरित्र, आत्मोत्थान के गुणों से सदा पूरित रहें। बचपन में शिक्षा, युवापन में धन और बुढ़ापे में पुण्य अवश्य अर्जित कर लेवें, नहीं तो अन्तिम अवस्था में पागल-पन जरूर आयेगा। युवा शिक्षा से ओतप्रोत रहें क्योंकि-''मदोदमत्वं यदिदं याति शिक्षायाम् यत् फलम्'' यह शिक्षा समस्त मदों को खत्म करने वाली होती है।

युवा के विचार इस रूप में होने चाहिएं-

निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह।

सकल मुन्हि के आश्रमन्हिं जाइ-2 सुख दीन्ह

परित्राणाम साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।

धर्म संस्थापनार्थाय संभवामि युगे-युगे।।

निन्दन्तु नीतिनिपुणाः यदि वा स्तुवन्तु।

लक्ष्मीः समाविशतु गच्छतु वा यथेष्टम्।।

अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा।

न्यायत्पथः प्रविचलन्ति पदं न धीरः।।

चाहे कोई भी स्थिति परिस्थिति होवे युवा नीतिवान् बनकर दुष्टों के नाश, साधुओं की समृद्धि व सत्य की उन्नति में सदा समर्पित होवे। फिर चाहे वह व्यक्तिगत उन्नति होवे या सामाजिक व राष्ट्रीय उन्नति होवे। यह अवस्था अधिकारों की मांग की न होकर कर्त्तव्य पारायणता की है।

आर्य समाज का नारी सशक्तिकरण में रहा है महत्वपूर्ण योगदान

आर्य समाज मंदिर, आर्य समाज चौक, पटियाला द्वारा विश्व महिला दिवस के उपलक्ष्य में आर्य समाज और नारी सशक्तिकरण विषय पर विचार गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस अवसर पर वैदिक विदुषी साध्वी विशोका यति, हिसार से मुख्य प्रवक्ता के तौर पर विशेष रूप से पहुंची, उन्होंने कहा कि उन्नीसवीं सदी में भारतीय समाज में नारी की दशा बहुत ही दयनीय थी। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने नारी को पुरुष के बराबर का दर्जा दिया, स्त्री जाति के लिए उन्होंने शिक्षा के द्वार खोल दिये। उन्होंने समाज से प्रश्न किया-पुरुषों को पढ़ने का अधिकार है तो नारी को क्यों नहीं ? स्वामी जी के निर्देशानुसार आर्य समाज ने पूरे देश में कन्या पाठशाला एवं गुरुकुल खोल दिये। आर्य समाज ने बाल विवाह, सती प्रथा जैसी कुरीतियाँ बंद करवाई। विधवाओं को पुनर्विवाह का अधिकार प्रदान करके आर्य समाज ने नारी सशक्तिकरण में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया।

कार्यक्रम का शुभारम्भ विश्व के सर्वश्रेष्ठ कर्म वैदिक यज्ञ के साथ किया गया आर्य समाज के पदाधिकारी एवं सदस्यों ने विश्व के लिए मंगल कामनाएं करते हुए यज्ञ अग्नि में आहुतियाँ प्रदान की, कार्यक्रम के संयोजक बिजेंदर शास्त्री एवं डॉ. ओमदेव आर्य ने सभी अतिथियों का स्वागत किया। इस अवसर पर गीता शर्मा, अध्यापिका डी ऐ वी पब्लिक स्कूल, पटिआला ने अपने उद्बोधन में कहा कि वर्तमान समय में नारी सभी क्षेत्रों में पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलकर काम कर रही है। नारी को समाज के नवनिर्माण में अपना महत्वपूर्ण योगदान निभाना होगा तभी एक सभ्य समाज का निर्माण हो पाएगा। स्वराज जोशी, प्रेम लता सिंगला, अंकिता सिंगला, योगिया आर्य, छवि सिंगला ने भी अपने विचार व्यक्त किये। आर्य समाज के प्रधान राज कुमार सिंगला ने सभी का धन्यवाद प्रगट किया और उन्होंने कहा कि स्त्री और पुरुष मिलकर ही परिवार और फिर समाज का निर्माण कर सकते हैं इसलिए स्त्री व पुरुष के आपसी प्रेम से ही समाज में सुख समृधि की वृद्धि हो सकती है। इस अवसर पर संगीता सिंगला, सुमन लता, अनुपमा आर्य, सरिता आर्य, वीरेंदर सिंगला, निखिल मंडल, वेद प्रकाश, जितेंदर शर्मा, प्रवीण कुमार, आनंद मोहन सेठी, यशपाल सिंगला, हर्ष वधवा एवं राजेश कोल आदि अनेक गणमान्य लोग उपस्थित रहे।

www.thearyasamaj.org

वेद मन्दिर अवांखा का वार्षिकोत्सव

वेद मन्दिर अवांखा का वार्षिकोत्सव 27, 28 फरवरी 2017 को पं. रामभज दत्त चौधरी के 151वें शुभ जन्मदिवस तथा स्व. सत्यपाल जी आर्य भिक्षु, स्व. वैद्य ज्ञान चन्द जी व प्रधान स्व. शंकर दास जी, महाशय पूर्ण चन्द, चौ. जय मुनि जी के श्रद्धांजलि समारोह के रूप में मनाया गया। दिनांक 27 फरवरी को दोपहर 2:00 बजे विशाल शोभायात्रा का आयोजन किया गया तथा रात्रि 8:00 बजे सत्संग का आयोजन किया गया। 29 फरवरी 2017 को कार्यक्रम का शुभारम्भ हवन यज्ञ के द्वारा किया गया। प्रातः 9:00 से 10:00 बजे तक यज्ञ हुआ जिसमें आए हुए सभी श्रद्धालुओं ने आहुतियां डालकर पुण्य प्राप्त किया। इस अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में श्री सरदारी लाल आर्य उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब उपस्थित रहे। ध्वजारोहण श्री स्वरूप कलारिया जी के कर कमलों के द्वारा किया गया। विशेष कार्यक्रम 10:00 से एक बजे तक था जिसमें महात्मा विशोकायति हिसार, पं. वेदव्रत शास्त्री, पं. अरूण वेदालंकार, पं. मनोहर लाल जी, पं. जतिन्द्र शास्त्री, पं. रामनिवास शास्त्री आदि विद्वान् व भजनोपदेशक उपस्थित रहे। इस अवसर पर चौधरी रामभज दत्त जी के पोते तथा अन्य परिवार वाले भी पहुंचे हुए थे। कार्यक्रम के पश्चात सभी ने ऋषि लंगर ग्रहण किया।

-विजय कुमार शास्त्री महामन्त्री वेद मन्दिर अवांखा

पुरोहित की आवश्यकता

आर्य समाज शास्त्री नगर जालन्धर में एक पुरोहित की आवश्यकता है जो वैदिक रीति से सभी संस्कारों को कराने की योग्यता रखता हो। दक्षिणा योग्यतानुसार दी जाएगी। आवास एवं बिजली पानी की व्यवस्था आर्य समाज की ओर से निःशुल्क रहेगी।

-भारत भूषण नंदा प्रधान आर्य समाज

पुरोहित की आवश्यकता

आर्य समाज बांसी गेट फिरोजपुर के लिए एक पुरोहित की आवश्यकता है जो वैदिक रीति से सभी संस्कारों को कराने की योग्यता रखता हो। दक्षिणा योग्यतानुसार दी जाएगी। आवास एवं बिजली पानी की व्यवस्था आर्य समाज की ओर से निःशुल्क रहेगी।

-विपन धवन मो.-94176-30786

पृष्ठ 4 का शेष-आत्मा की उन्नति.....

यह ज्ञान आत्मोन्नति के साधक हैं। आत्मोन्नति होने पर मनुष्य असत्य कामों व व्यवहारों को छोड़ कर सद्कर्मों से धनोपार्जन करता है जिसमें उसे सफलता मिलती है और वह सभी प्रकार के अभावों से दूर हो जाता है। वह परमुखापेक्षी नहीं होता। पुरुषार्थ एवं स्वाभिमान व सद्कर्म ही उसकी पूंजी होते हैं। ऐसे कुछ लोग कई बार दूसरे लोगों के आर्थिक शोषण का शिकार हो जाते हैं। यह उनका प्रारब्ध या विवेक ज्ञान में कुछ कमी हो सकती है। यदि वह स्वतन्त्रतापूर्वक पूर्ण उत्साह व धार्मिक लोगों से सहयोग से कोई भी कार्य करें तो उसमें उन्हें सफलता मिल सकती है।

मनुष्य को आत्मोन्नति अवश्य करनी चाहिये जिससे उनका यह जीवन सुख व शान्ति के साथ व्यतीत हो व मृत्यु के बाद भी उनकी आत्मोन्नति व जीवनोन्नति में किन्हीं अपकर्मों के कारण कोई बाधा न आ सके। सत्याचरण, विद्या का धारण तथा वेदाचरण ही आत्मोन्नति व जीवनोन्नति के प्रमुख आधार व कारण हैं। जीवन में इनसे संयुक्त रहना चाहिये। इसी के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

-पं. जगदीश चन्द्र "वसु" जी "स्वामी धर्मानन्द विद्यामार्तण्ड आर्यभिक्षु पुरस्कार" से सम्मानित

आर्य समाज एवं महर्षि दयानन्द सरस्वती के सच्चे अनुयायी एवं वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार हेतु आजीवन समर्पित मान्य श्री पं. जगदीश चन्द्र वसु जी को "माता लीलावती आर्य भिक्षु, परोपकारिणी न्यास" आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर हरिद्वार द्वारा दिनांक 31 जनवरी 2017 दिन मंगलवार को सम्मानित किया गया। यह सम्मान उन्हें आर्य समाज तथा वेद-प्रचार के कार्यों के लिए दिया गया। पं. वसु जी सन् 1959 से निरन्तर लगभग 60 वर्षों से महर्षि दयानन्द के विश्व कल्याणकारी मिशन वेद प्रचार एवं प्रसार के कार्यों में सर्वात्मना समर्पित होकर लगे हुए हैं। उन्होंने युवावस्था में प्रतिज्ञा की थी कि सरकारी नौकरी नहीं करेंगे और वैदिक-सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में लगकर उपदेशक कार्य करेंगे तथा आजीवन लगे भी रहेंगे।

वसु जी एक लेखक एवं वक्ता हैं, ऋषि भक्त एवं उद्भट्ट विद्वान् हैं। उन्होंने लगभग 30 पुस्तकों का लेखन भी किया है। वसु जी सम्पूर्ण भारतवर्ष के भिन्न-भिन्न प्रान्तों में यथा-हरयाणा, पंजाब, हिमाचल, राजस्थान, जम्मू-कश्मीर, केरल, पश्चिम बंगाल, नेपाल आदि में घूम कर प्रचार-प्रसार का कार्य करते रहे हैं। आपने अपने अथक परिश्रम से देसराज कालोनी पानीपत में 7 फरवरी सन् 1987 को आर्य समाज की स्थापना भी की जहाँ प्रतिवर्ष 'वेद प्रचार सप्ताह' एवं 'वार्षिक महोत्सव' बड़ी धूमधाम के साथ मनाया जाता है। आपके लेख आर्य जगत् की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते हैं।

"माता लीलावती आर्य भिक्षु परोपकारिणी न्यास" आर्य वानप्रस्थ, ज्वालापुर, हरिद्वार द्वारा प्रदत्त "स्वामी धर्मानन्द विद्यामार्तण्ड आर्य भिक्षु सम्मान" केवल वसु जी का सम्मान व अभिनन्दन नहीं है अपितु सम्पूर्ण आर्य जगत् का है, महर्षि के कल्याणकारी सिद्धान्तों का है।

मैं "माता लीलावती आर्य भिक्षु परोपकारिणी न्यास" आर्य वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर, हरिद्वार की समस्त कार्यकारिणी का आर्य जगत् परिवार की ओर से आभार तथा धन्यवाद व्यक्त करता हूँ।

हवन यज्ञ सम्पन्न

दयानन्द पब्लिक स्कूल में हवन समारोह आयोजित किया गया। पण्ड़ित रमेश शास्त्री जी ने हवन करवाया। बच्चों को मन्त्र उच्चारण सिखाया सभी बच्चों ने मन्त्रों के साथ हवन में आहुतियाँ डाली। वार्षिक परीक्षा के अच्छे परिणाम के लिए प्रभु से प्रार्थना की।

दयानन्द पब्लिक स्कूल में अलविदा पार्टी का आयोजन किया गया। नौवी कक्षा के विद्यार्थियों ने दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों को अलविदा पार्टी दी। विद्यार्थियों के बीच प्रतिस्पर्धा कराई गई। जिसमें से मिस फेयर वेल और मिस्टर फेयरवेल चुने गए। पेपर डांस प्रतियोगिता, बैलून डांस प्रतियोगिता भी कराई गई। प्रिंसीपल मैडम व वाईस प्रिंसीपल मैडम और स्कूल के प्रधान श्री संतकुमार जी द्वारा बच्चों को पुरस्कार दिए गए और उन को भविष्य में हमेशा आगे आने के लिए प्रेरित किया गया। अंत में बच्चों को लंन्च देकर विदा किया गया।

-प्रिं० दयानन्द पब्लिक स्कूल, लुधियाना

पृष्ठ 1 का शेष-आर्य समाज को नया रूप...

28 मार्च 2017 को विक्रमी नव संवत् व आर्य समाज स्थापना दिवस मनाते हुए हम वर्तमान परिस्थितियों पर चिन्तन करते हुए आर्य समाज को फिर से नई दिशा देने के लिए कार्य करें। सभी आर्य बन्धु आर्य समाज के सिद्धान्तों पर चलते हुए, संगठन को सुदृढ़ता प्रदान करते हुए वैदिक सिद्धान्तों के प्रचार पर बल दें। यह दिवस हमारे लिए आत्मचिन्तन का अवसर है। इस अवसर पर हमें चिन्तन करना चाहिए कि वर्तमान में आर्य समाज के सामने जो चुनौतियां है उन चुनौतियों का सामना कैसे करें। आर्य समाज के सिद्धान्तों और मन्तव्यों का, वेद की शिक्षाओं का जन-जन में किस प्रकार प्रचार और प्रसार हो? इस पर विचार करते हुए अगर हम आर्य समाज की उन्नति के लिए कार्य करेंगे तो आर्य समाज का लक्ष्य पूर्ण होगा।

www.thearyasamaj.org

वेदवाणी

उसको जानो

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन् यस्मिन्देवा अधिविश्वे निषेदुः।
यस्तन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद् विदुस्त इमे समासते।।

-ऋ. १/१६४/३९; अथर्व० ९/१०/१८

ऋषिः-दीर्घतमा।। देवता-विश्वेदेवाः।। छन्दः-भुरिक्त्रिष्टुप्।।

विनय-हे मनुष्य ! यदि तूने सब ऋचाओं की एक आधारभूत वस्तु को नहीं जाना है तो वेद की ऋचाएँ पढ़कर तू क्या करेगा ? उसके जाने बिना वेद पढ़ना निष्फल है, समय खोना है। वेद उसे ही पढ़ने चाहिएँ जिसे वेदमन्त्रों के एक प्रतिपाद्य विषय उस अक्षरतत्त्व को जाने की इच्छा है जोकि 'परम व्योम' है, एक परम आकाश है। वह इस प्रसिद्ध आकाश से भी उत्कृष्ट है। वह इतना व्यापक आकाश है कि यह सब विविध ब्रह्माण्ड उसमें ओत-प्रोत है। इसीलिए वह 'परम व्योम' कहाता है। उसे ज्ञानी लोग 'ओं' इस अक्षर से भी पुकारते हैं। वह विविध प्रकार से सबकी रक्षा करने वाला (व्योम), अविनाशी (अक्षर) तत्त्व है। सब देवता, सब संसार, उस एक में समाया हुआ है। प्रत्येक वेदमन्त्र किसी-न-किसी देवता की स्तुति करता है, परन्तु ये वेद-प्रतिपाद्य सब-के-सब देवता उस एक ही देव में ठहरे हुए हैं। इसलिए यदि उस एक देव को जानने की, उसे पाने की इच्छा है, तभी वेदमन्त्रों को पढ़ो। वेदमन्त्रों को इसलिए मत पढ़ो कि उनमें से किन्हीं अपने अभीष्ट विचारों को निकालेंगे या उसके ऐसे अर्थ करेंगे जिनसे कुछ भलाई सिद्ध होगी। वेद का ऐसा पढ़ना तो निष्फल ही नहीं, किन्तु पाप है। हमें वेदमन्त्रों के पास इस पवित्र भाव से पहुँचना चाहिए कि ये हमें उस एक देव के पवित्र चरणों में पहुँचाने के साधन होंगे। प्रत्येक वेदमन्त्र में हमें उस अक्षर प्रभु का प्रतिबिम्ब दिखाई देना चाहिए। इसलिए वे पुरुष जो उस तत्त्व को जानते हैं और जो यह जानते हैं कि सब ऋचाएँ उस अक्षर में हैं, ऐसे ज्ञानी लोग समासीन हो जाते हैं, ठीक तरह स्थित हो जाते हैं ; और यह अवस्था केवल ऐसे ही ज्ञानी लोगों को प्राप्त होती है। ऐसे ही ज्ञानी लोगों को शान्ति-प्राप्ति होती है, सब संशयों से रहित स्वस्थता और आनन्द की एक अवस्था प्राप्त हो जाती है। वेदमन्त्रों के ध्यान से वे लोग समाहित (समाधिस्थ) हो जाते हैं, उस अक्षर में लीन होने का परमानन्द पाते हैं। वहाँ ऋचाओं का पढ़ना सफल हो जाता है।

आर्य मर्यादा के ग्राहक महानुभावों की सेवा में

आर्य मर्यादा साप्ताहिक निरन्तर आपकी सेवा में पहुंच रही है। जिन आर्य मर्यादा के ग्राहकों ने अभी तक अपना वार्षिक शुल्क या पिछला शुल्क नहीं भेजा है उनसे विनम्र प्रार्थना है कि वह अपना वार्षिक शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। आर्य मर्यादा का वार्षिक शुल्क मात्र 100/- रुपये है और आजीवन सदस्यता शुल्क 1000/- रुपये है। इसलिये मेरी सभी ग्राहक महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपना शुल्क जल्द से जल्द भिजवाने की व्यवस्था करें। इसके साथ ही आर्य समाजों के पदाधिकारियों एवं सदस्यों से भी निवेदन है कि वह अधिक से अधिक आर्य मर्यादा के ग्राहक बनाने में सहयोग करें। आशा है आप का सहयोग हमें प्राप्त होगा। -व्यवस्थापक आर्य मर्यादा

गुरुकुल का आयुर्वेद महान
घर-घर में मिले रोगों से निदान

गुरुकुल च्यवनप्राश
सभी के लिए स्वादिष्ट,
रुचिकर, पौष्टिक रसायन।

गुरुकुल पायोकिल
पायोरिया की आयुर्वेदिक औषधि
दांतों में खून रोके, मुंह की दुर्गन्ध दूर करे,
मसूड़ों के रोग, ढीले दांत ठीक करे।

गुरुकुल मधु
गुणवत्ता एवं ताज़गी के लिए

गुरुकुल चाय
खाँसी, जुकाम, इन्फ्लूएंजा व
थकान में अत्यंत उपयोगी।

गुरुकुल शतशिलाजीत सूर्यतापी
पुष्टीदायक, बलवर्धक
शरीर में नया खून और उत्साह का अनुभव

गुरुकुल ब्राह्मी रसायन
बुद्धिवर्धक, स्फूर्तिदायक, दिमागी कमजोरी दूर करे।

गुरुकुल मधुमेह नाशिनी गुटिका
मधुमेह एवं प्रत्येक प्रकार के प्रमेह में लाभदायक

अन्य प्रमुख उत्पाद
गुरुकुल द्राक्षारिष्ठ
गुरुकुल रक्तशोधक
गुरुकुल अश्वगंधारिष्ट

गुरुकुल कांगड़ी फार्मेसी, हरिद्वार डाकघर : गुरुकुल कांगड़ी-249404, ज़िला-हरिद्वार (उत्तरांचल) फोन : 0134-416073

शाखा कार्यालय : 63, गली राजा केदार नाथ, चावड़ी बाज़ार, दिल्ली-6, फोन : 23261871

श्री प्रेम भारद्वाज महामन्त्री, सम्पादक, प्रकाशक, मुद्रक द्वारा आर. के. प्रिंटर्स प्रैस, टाण्डा फाटक जालन्धर से मुद्रित होकर आर्य मर्यादा कार्यालय, गुरुदत्त भवन, चौक किशनपुरा, जालन्धर से इसकी स्वामिनी आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के लिए प्रकाशित हुआ। E-mail: apspunjab2010@gmail.com
आर्य मर्यादा में प्रकाशित सारी लेखन सामग्री से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं। प्रत्येक विवाद के लिए न्याय क्षेत्र जालन्धर होगा।